

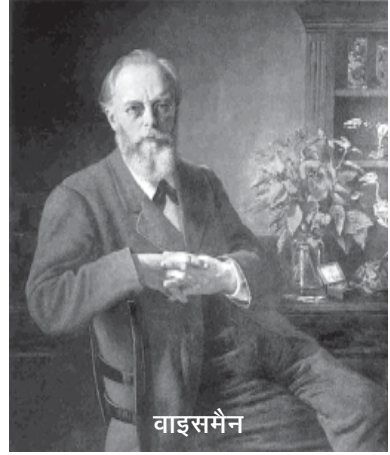
बनते-सँवरते विचारों के वैज्ञानिक - वाइसमैन

सुशील जोशी

उन्नीसवीं सदी के एक वैज्ञानिक हुए हैं फ्राइडरिश लियोपोल्ड ऑगस्ट वाइसमैन (1834-1914) जिन्हें उन्नीसवीं सदी में डार्विन के बाद दूसरा सबसे उल्लेखनीय जैव विकास सिद्धान्तविद कहा जाता है। दरअसल, वाइसमैन वे पहले जीव वैज्ञानिक थे जिन्होंने डार्विन के जैव विकास सिद्धान्त का उपयोग विभिन्न जीव वैज्ञानिक परिघटनाओं की व्याख्या हेतु किया था। साथ ही, यह भी उल्लेखनीय है कि वाइसमैन ने डार्विन के कई विचारों को ज़बर्दस्त चुनौती भी दी थी।

उन्नीसवीं सदी जीव विज्ञान में काफी उथल-पुथल की गवाह रही है। चार्ल्स डार्विन और अल्फ्रेड वालेस द्वारा जैव विकास की क्रियाविधि प्रतिपादित करने के बाद जीव विज्ञान का हुलिया बदलने लगा था। उससे पहले ज़्याँ बैटिस्टे डी लैमार्क ने भी जैव विकास का अपना सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। इनके अलावा सृष्टिवादियों की अपनी धारणाएँ थीं। इस बहस में वाइसमैन का योगदान निहायत निर्णायक माना जा सकता है।

मूलतः ईसाई धर्मावलम्बी सृष्टि-वादियों का मत था कि इस संसार व सजीवों समेत इसके समस्त घटकों



वाइसमैन

की रचना ईश्वर ने की है। यानी एक बार में पूरी सृष्टि की रचना हुई है और इसकी क्रियाविधि को समझने की कोशिश ही बेमानी है। लेकिन धरती पर परिवर्तनों के तमाम सबूतों के मद्देनज़र यह मानना ज़रूरी हो गया था कि हमारी धरती हमेशा से ऐसी नहीं रही है। यह भी पता चलने लगा था कि सजीवों के जो रूप आज हम देखते हैं, वे अतीत में शायद थे ही नहीं या बहुत अलग रूप में थे। यह भी स्पष्ट हो चला था कि अतीत में पाए जाने वाले कई जीव आज इस धरती पर नहीं पाए जाते। यानी

स्थापित्व नहीं, परिवर्तन प्रकृति का नियम लगने लगा था। इन सब प्रमाणों के चलते जीवजगत में क्रमिक विकास की धारणा ज़ोर पकड़ने लगी थी।

लैमार्क व डार्विन

लैमार्क ने इस जैव विकास की क्रियाविधि को स्पष्ट करते हुए यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया था कि हरेक जीव अपने पर्यावरण में जीने के लिए कई रणनीतियाँ अपनाते हैं। इस दौरान उनके शरीर के कुछ अंगों का ज़्यादा उपयोग होता है, तो कुछ का कम। जिन अंगों का ज़्यादा उपयोग होता है वे विकसित हो जाते हैं जबकि जिन अंगों का उपयोग नहीं होता वे धीरे-धीरे लुप्त हो जाते हैं। यानी लैमार्क के मुताबिक कोई जीव अपने जीवनकाल में जो लक्षण अर्जित करता है, वे उसकी सन्तानों को मिल जाते हैं और यही जैव विकास का आधार है।

चार्ल्स डार्विन अपने विस्तृत अध्ययनों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि जीवों में कुदरती रूप से भरपूर विविधता पाई जाती है। यानी एक ही प्रजाति के सारे जीव भी एकदम एक जैसे नहीं होते। उनमें छोटे-मोटे अन्तर होते हैं। इनमें से कुछ अन्तर वंशानुगत होते हैं, यानी ये अगली पीढ़ी को मिल सकते हैं। इनमें से कुछ अन्तर ऐसे भी होते हैं जो उस जीव को जीवनयापन में थोड़ी सुविधा या दिक्कत प्रदान करते हैं। ये छोटे-छोटे अन्तर ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी

संग्रहित होते हैं और जैव विकास का आधार बनते हैं। अलबत्ता, डार्विन यह स्पष्ट नहीं कर पाए थे कि यह विविधता पैदा कैसे होती है। इससे पहले ही मेंडल ने अनुवांशिकी के अपने नियम प्रस्तुत तो कर दिए थे मगर किसी ने उन पर ध्यान नहीं दिया था।

वाइसमैन की विधि

वाइसमैन ने पहले तो सृष्टिवाद पर विचार किया। उनका विचार करने का तरीका गौरतलब है। उन्होंने शुरुआत यहाँ से की कि सम्भव है कि सृष्टिवाद या जैव विकास में से कोई एक सही हो। फिर वे विभिन्न उदाहरण लेकर देखते थे कि इन दो सिद्धान्तों में कौन-सा बेहतर व्याख्या कर सकता है। उस समय लिखी अपनी पुस्तक 'उबेर डी बेरेक्टिंगुंग डेर डारविनसेन थियरी (डार्विन के सिद्धान्त का औचित्य)' में वे बताते हैं कि कई सारे जीव वैज्ञानिक तथ्य जैव विकास के सिद्धान्त में तो एकदम फिट हो जाते हैं मगर यदि यह माना जाए कि ये सृष्टिवादी क्रिया के परिणाम हैं तो बात उलझ जाती है।

इस पुस्तक को लिखने के बाद वाइसमैन इस बात के कायल हो गए थे कि जैव विकास उसी स्तर का तथ्य है जिस स्तर पर सूर्य-केन्द्रित ब्रह्माण्ड की सच्चाई है। इसके बाद वाइसमैन ने जैव विकास की क्रियाविधि पर विचार किया। इसमें उन्होंने एक

बार फिर वही तरकीब अपनाई - जीव विज्ञान के उपलब्ध तथ्यों की व्याख्या लैमार्क व डार्विन के विचारों के आधार पर करना।

दरअसल, शुरु-शुरु में वाइसमैन मानते थे कि किसी जीव के जीवन में अर्जित लक्षण अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं और यही विकास का आधार होता है। यानी इस मामले में वे लैमार्क के समर्थक थे। उनका भी मत था कि पर्यावरण में बदलाव हो, तो सजीवों के रूप में परिवर्तन आता है और यही परिवर्तन लम्बे समय में स्वरूप में व्यापक परिवर्तनों की शक्ल अख्तियार कर लेता है। मगर 1883 आते-आते उनके विचारों में आमूल बदलाव आया। यह परिवर्तन खुले दिमाग का परिणाम माना जा सकता है।

एक बार फिर उन्होंने पाया कि जीव विज्ञान के तथ्यों की व्याख्या लैमार्क के सिद्धान्त के आधार पर नहीं की जा सकती जबकि डार्विन का सिद्धान्त और स्वयं उनके द्वारा विकसित किया गया जर्म प्लाज़्म का सिद्धान्त इनकी व्याख्या आसानी से कर देता है। जर्म प्लाज़्म की चर्चा हम थोड़ी देर में करते हैं। इसे आधुनिक जीव विज्ञान का एक बुनियादी सिद्धान्त माना जाता है।

वाइसमैन के तर्क का एक उदाहरण देखिए। चींटियों, दीमकों, मधुमक्खियों वगैरह में वन्ध्या (sterile) सदस्य पाए जाते हैं। अर्जित लक्षणों के हस्तान्तरण

के आधार पर इन वन्ध्या सदस्यों की व्याख्या असम्भव है क्योंकि ये वे सदस्य हैं जो प्रजनन करते ही नहीं। फिर इनका यह गुण अगली पीढ़ी में कैसे पहुँचता है?

लैमार्क के सिद्धान्त को सही साबित करने के लिए कई उदाहरण दिए जाते थे। जैसे यह बताया जाता था कि जिन समुदायों में लिंग की अगली त्वचा को काटकर हटा देने (circumcision) की प्रथा है, उनमें कुछ सदस्य इस त्वचा के बगैर ही पैदा होने लगे हैं। इस मुकाम पर वाइसमैन ने एक प्रयोग किया था, जो आज के मापदण्डों के आधार पर क्रूरता की श्रेणी में आएगा। उन्होंने करीब डेढ़ हज़ार चूहों की पूँछ काट डाली और अगली 20 पीढ़ियों तक उनकी सन्तानों की पूँछें काटते गए। मगर इक्कीसवीं पीढ़ी के सारे चूहे फिर भी पूँछ वाले ही पैदा हुए थे। इस प्रयोग के आधार पर और विभिन्न उदाहरणों के विश्लेषण के आधार पर उन्होंने 1883 में एक व्याख्यान दिया था - 'ऑन इनहेरिटेन्स (अनुवांशिकता बाबत)।'

रोचक बात यह है कि इस व्याख्यान में उन्होंने जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त के आधार पर डार्विन के सिद्धान्त की व्याख्या भी की थी। खासतौर से उन्होंने अवशिष्ट अंगों की व्याख्या के लिए जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त का उपयोग किया था। यह बात रोचक इसलिए है क्योंकि जर्म प्लाज़्म का सिद्धान्त डार्विन के प्रजनन सम्बन्धी विचारों के विपरीत

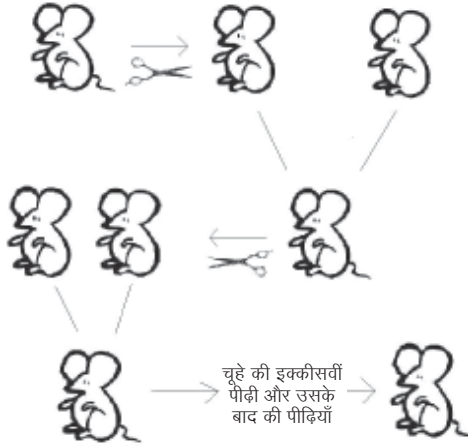
था। आइए अब जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त पर ही चर्चा करते हैं।

जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त

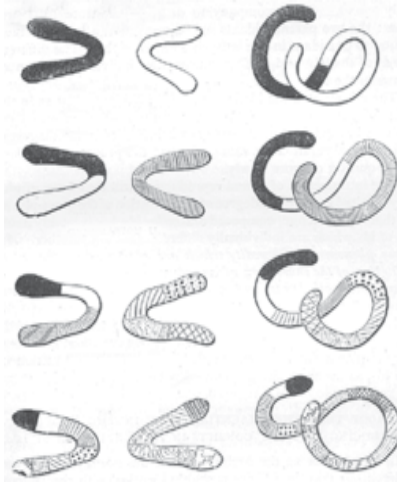
वैसे जिनेटिक रूप से परिवर्तित जीवों और जैव विविधता वगैरह के सन्दर्भ में जर्म प्लाज़्म आजकल काफी प्रचलित जुमला हो गया है। यह अवधारणा आधुनिक जीव विज्ञान की एक बहुत ही महत्वपूर्ण अवधारणा है। लैंगिक प्रजनन के दौरान होता यह है कि जीव के गुण अगली पीढ़ी को मिलते हैं। यह कैसे होता है? इसकी समझ धीरे-धीरे ही विकसित हुई थी। मसलन, एक विचार यह था कि प्रत्येक

जीव में जो प्रजनन सम्बन्धी कोशिकाएँ होती हैं, उनमें उस जीव का एक लघु रूप मौजूद रहता है जो बाद में विकसित होकर पूरा जीव बन जाता है। इसे पूर्व-निर्माण या प्री-फॉर्मेशन कहते हैं। सवाल उठता है कि यह लघु जीव कहाँ से आता है।

डार्विन का मत था कि किसी भी जीव (यानी बहु-कोशीय जीव) का प्रत्येक अंग कुछ पदार्थ (गेम्ब्ल्स) का स्राव करता है जो प्रजनन अंगों में पहुँचता है। हरेक अंग से प्राप्त पदार्थ से ही जीव का लघु रूप निर्मित होता है। इस विचार को पैन्जिनेसिस कहते हैं।



चूहों के साथ प्रयोग: कौन-से गुण या लक्षण किसी जीव द्वारा अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं इसे समझने के लिए वाइसमैन ने एक लम्बी अवधि का प्रयोग किया। इसमें उन्होंने अनेक चूहों की पूँछें काट डालीं और अगली 20 पीढ़ियों तक उनकी सन्तानों की पूँछें भी काटते चले गए। लेकिन जब इन चूहों की इक्कीसवीं पीढ़ी पैदा हुई तब भी सारे चूहे पूँछवाले ही पैदा हुए थे।



इस रेखाचित्र में जर्मन जीवविज्ञानी वाइसमैन ने यह दिखाने की कोशिश की है कि क्रोमोसोम में रखा गया हस्तान्तरणीय पदार्थ किस तरह प्रजनन के दौरान न्यूक्लियस में संयोजित होता है।

वाइसमैन ने डार्विन के प्राकृतिक चयन के विचार का तो समर्थन किया था, परन्तु उन्हें डार्विन द्वारा अनुवांशिकता के लिए दी गई व्याख्या स्वीकार्य नहीं थी। वाइसमैन का विचार था कि अनुवांशिक पदार्थ शरीर के अन्य हिस्सों से काफी अलग और अप्रभावित रहता है। इस नज़रिए ने आगे चल कर अनुवांशिकता सम्बन्धी जेनेटिक सिद्धान्त का मार्ग प्रशस्त किया।

उस समय कोशिकाओं पर कई वैज्ञानिक कार्य कर रहे थे। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में कोशिका विभाजन की खोज हुई, यह पता चला कि कोशिका विभाजन दो तरह का होता है - एक में गुणसूत्रों की संख्या नहीं बदलती, जबकि दूसरे में गुणसूत्रों की संख्या आधी रह जाती है। पहले किस्म के कोशिका विभाजन को मायटोसिस कहते हैं जबकि दूसरे किस्म को मियोसिस कहते हैं। प्रजनन क्रिया में शुक्राणु व अण्डाणु का निर्माण मियोसिस

के द्वारा होता है। यह वाइसमैन का मौलिक योगदान था कि उन्होंने मियोसिस का सम्बन्ध प्रजनन व अनुवांशिकता से देखा।

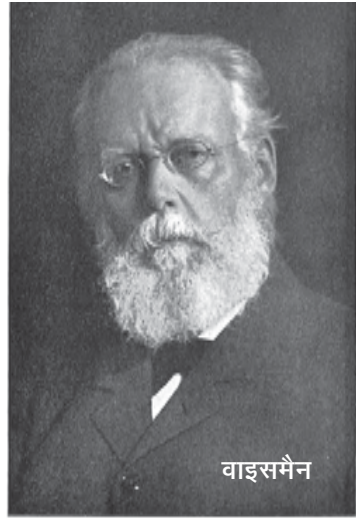
मियोसिस द्वारा निर्मित प्रजनन कोशिकाओं यानी जन्यु को उन्होंने जर्म कोशिका नाम दिया और बताया कि गुणों का हस्तान्तरण सिर्फ जर्म कोशिकाओं के माध्यम से होता है। जीव की अन्य कोशिकाएँ (कायिक कोशिकाएँ) इसमें कोई योगदान नहीं देतीं। अर्थात् जर्म कोशिकाओं में मौजूद

अनुवांशिक पदार्थ ही अनुवांशिकता के लिए ज़िम्मेदार है।

वाइसमैन ने यह भी स्पष्ट किया कि जर्म कोशिकाएँ पूरे जीव का निर्माण कर सकती हैं, यानी वे जर्म कोशिकाओं का निर्माण भी कर सकती हैं और शरीर की समस्त कायिक कोशिकाओं का निर्माण भी कर सकती हैं। इसका मतलब है कि जर्म कोशिकाएँ अगली पीढ़ी के जीव की रचना पर असर डालती हैं। यदि पर्यावरण का असर जर्म कोशिकाओं पर हो, तो वह अगली पीढ़ी की कायिक कोशिकाओं में नज़र आएगा। मगर यदि कायिक कोशिकाओं में कोई परिवर्तन हो, तो वह जर्म कोशिकाओं को प्रभावित नहीं करता और लिहाज़ा इसका अगली पीढ़ी पर कोई असर नहीं दिखता। दूसरे शब्दों में, यह एकांगी प्रभाव है। इसे 'वाइसमैन अवरोध' भी कहते हैं। यह आधुनिक जैव विकास सम्बन्धी समझ के मूल में है।

वाइसमैन ने जब यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया था, उस समय तक मेंडल के अनुवांशिकी के नियमों को फिर से खोजा नहीं गया था। जब उन्नीसवीं सदी के अन्तिम वर्षों में ये नियम सबके सामने आए, तो वाइसमैन इनके साथ तालमेल न बना सके मगर उनके अनुयायियों ने जल्दी ही जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त और मेंडल के नियमों का सम्बन्ध देख लिया।

बहरहाल, जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त विकसित करते हुए वाइसमैन कई



वाइसमैन

मामलों में गच्चा भी खा गए। जैसे 1885 में उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि एक-कोशिकीय भ्रूण में जब विभाजन होता है तो उससे बनने वाली दो कोशिकाओं में आधा-आधा जर्म प्लाज़्म ही जाता है। यानी प्रत्येक कोशिका विभाजन के साथ जर्म प्लाज़्म की मात्रा कम होती जाती है। जब यह मात्रा बहुत कम हो जाती है तो कोशिका की और साथ में जीव की भी मृत्यु हो जाती है। दरअसल, वाइसमैन पूर्व-निर्धारित मृत्यु (प्रोग्राम्ड डेथ) की व्याख्या करने का प्रयास कर रहे थे। डार्विन और स्वयं वाइसमैन के मुताबिक जीवों की मृत्यु का जैव विकास में एक महत्वपूर्ण स्थान है। उनके अनुसार जब कुछ जीव मरकर जगह खाली करेंगे, तभी तो नए (ज़्यादा विकसित जीवों) के लिए संसाधन उपलब्ध होंगे। वैसे उस समय के अधिकांश जीव वैज्ञानिकों ने इस विचार पर आपत्तियाँ

दर्ज़ की थीं।

वाइसमैन के इस विचार की पुष्टि प्रयोग से करने का काम एक अन्य जीव वैज्ञानिक विलियम रूक्स ने किया। रूक्स ने मेंढक (*राना एस्क्यूलेन्टा*) का भ्रूण लिया जिसमें अभी दो कोशिकाएँ ही बन पाई थीं। उन्होंने एक गर्म सुई चुभोकर एक कोशिका को नष्ट कर दिया। जब इस भ्रूण का विकास हुआ तो कई अंग नहीं बने थे। रूक्स का कहना था कि भ्रूण में जब एक कोशिका से दो बनी थीं, तो उनमें आधा-आधा जर्म प्लाज़्म ही पहुँचा था, इसलिए एक कोशिका को नष्ट करने पर बची हुई कोशिका के आधे जर्म प्लाज़्म से आधा-अधूरा जीव विकसित हुआ। इसे वाइसमैन के विचारों की पुष्टि माना गया।

मगर कुछ अन्य वैज्ञानिकों को इसमें सन्देह था और उन्होंने अपने ढंग से इस प्रयोग को दोहराया। जैसे हान्स एडोल्फ एडवर्ड ड्राइश ने मेंढक की बजाय समुद्री अर्चिन पर यह प्रयोग किया। उन्होंने अर्चिन का एक दो-कोशिकीय भ्रूण लिया और उसे नमकीन पानी में रखकर खूब हिलाया। इस तरह से भ्रूण की दो कोशिकाएँ अलग-अलग हो गईं। इन दोनों को विकसित होने दिया गया तो पूरी तरह सामान्य अर्चिन बने। यानी दोनों कोशिकाओं

में पूरा जर्म प्लाज़्म था। ऐसा लगता है कि रूक्स के प्रयोग में गर्म सुई ने दूसरी कोशिका को भी प्रभावित किया था।

अलबत्ता जर्म प्लाज़्म का सिद्धान्त विकसित होता गया और इसने लैमार्क के अर्जित गुणों के हस्तान्तरण को हमेशा के लिए दफन कर दिया। जर्म प्लाज़्म सिद्धान्त आगे चलकर क्लोनिंग का भी आधार बना। क्लोनिंग के मूल में यह बात है कि शरीर की प्रत्येक कोशिका में पूरा जर्म प्लाज़्म मौजूद होता है।

कुल मिलाकर वाइसमैन का यह सबसे महत्वपूर्ण व निर्णायक योगदान इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है: बहुकोशिकीय जीवों में जर्म कोशिकाओं में अनुवांशिक सूचना होती है। हालाँकि कायिक कोशिकाओं में भी अनुवांशिक सूचनाएँ होती हैं पर वे इसका पूरा उपयोग नहीं करतीं, यानी इन्हें अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित नहीं करतीं और सिर्फ सामान्य शारीरिक कार्य सम्पन्न करती हैं। जर्म कोशिकाओं पर न तो पर्यावरण का असर होता है और न ही जीव के जीवन काल में सीखने या अन्य शारीरिक परिवर्तनों का कोई असर होता है। कायिक कोशिकाओं की ये सूचनाएँ उस जीव के साथ गुम हो जाती हैं।

सुशील जोशी: एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख स्रोत फीचर्स के नवम्बर 2010 अंक से साभार।